शोध–पत्र

प्रस्तुतकर्त्री
डॉ. गीतू धवन

विषयः – स्त्री स्वतंत्रता का प्रश्न : स्त्री लेखिकाओं की दृष्टि।

स्त्री को भले ही कोई अबला कहे या कमजोर। परंतु इतिहास साक्षी है कि वह पुरुष की शक्ति है। जीवन के प्रत्येक कदम पर पुरुष को संबल देती, उसकी सहगामिनी बन, जीवन भर साथ निभाती है। समाज में स्त्रियों के लिए अनेक दायित्वों की व्यवस्था की गई है, यथा–घर संभालना, पुरुष को सुख, शान्ति देना, संतान उत्पन्न करना तथा उसका लालन–पालन आदि। एक सदी, दो सदी कई सदियां बीत गईं, मगर नारी को दायित्व रूपी जिस दायरे में रखा गया वह उसी में पड़े हुए आज भी अपने दायित्व को बखूबी निभा रही है।

माना जा रहा है कि आज स्त्रियों की स्थिति में सुधार आया है। स्त्रियां आज पहले की अपेक्षा अत्यधिक सजग एवं सशक्त हैं। मगर वास्तव में ऐसा नहीं है? ''समय, सत्ता, शासन, प्रशासन सभी बदलते रहे हैं, लेकिन वह आज भी अपने अस्तित्व की खोज में लगी है। आज के सूचना प्रोद्यौगिकी और इंटरनेट के युग में जहां नारी ने अंतरिक्ष सहित सभी क्षेत्रों में सफलता प्राप्त कर ली है, वहां अनेक परिवार तथा समाज आज भी ऐसे हैं। जहां नारी को जीवन की मूलभूत सुविधाएं भी प्राप्त नहीं हो पाती है।''[1.] जबकि भारतीय संविधान ने स्त्रियों और पुरुषों को समान अधिकार प्रदान किए हैं। किंतु बावजूद इसके आज भी महिलाओं के साथ भेदभाव और असमानता का व्यवहार किया जाता है। उन्हें विकास के समुचित अवसर प्राप्त नहीं हैं। यहां प्रश्न यह उठता है कि किसी स्त्री के लिए विकास अधिक महत्वपूर्ण है या सशक्तिकरण। इसका जवाब होगा, दोनों ही जरूरी हैं। सशक्तीकरण के बिना स्त्री विकास की बात सोचना ही व्यर्थ है। ''स्त्री सशक्तीकरण अर्थात् स्त्रियों को शक्तिशाली बनाना, स्त्रियों को वे सारे उपकरण उपलब्ध करवाना, जिनकी सहायता से 'आधी दुनिया' उन्नति कर सकती है

और आगे बढ़ सकती है।''[2.] 'आधी दुनिया' से तात्पर्य समस्त जनसंख्या के अर्द्धांश से है और समूची जनसंख्या का अर्द्धांश स्त्री ही है। ये आधी दुनिया अगर अशिक्षित और पर–निर्भर और अत्याचार का शिकार होती रही तो समाज कभी आगे नहीं बढ़ सकता। सम्पूर्ण विश्व में आज महिलावाद, स्त्रीवाद, या महिला सशक्तीकरण का शोर है। मगर महिलाओं की स्थिति आज भी वैसी की वैसी ही है। सशक्तीकरण के इस शोर के साथ–साथ स्त्री संबंधी ये धारणाएं भी साथ चलती हैं, यथा–औरतें राजनीति नहीं जानती, अर्थनीति नहीं समझतीं, क्रिकेट नहीं जानतीं, औरतें मुश्किल काम करने में नाकाम रहती हैं। औरतें नहीं जानतीं, औरतें कुछ नहीं कर सकतीं, औरतें कुछ नहीं समझतीं, इन्हीं बातों का डंका बजाया जाता है। हालांकि औरतों ने बार–बार यह साबित किया है कि वे सब कुछ कर सकती हैं, सब कुछ जानती हैं, सब समझती हैं। बावजूद इसके स्त्री की सभी जानकारी, उसकी योग्यता और उसकी समझ को शारीरिक तौर पर अस्वीकार कर दिया जाता है।

वैसे देखा जाए तो – ''औरतों में ऐसी किस बात की कमी है कि वो मजबूत दीवारें नहीं तोड़ सकतीं। अगर किसी ने उन लोगों का हथियार छीन लिया तो औरतें भी पलट कर उन लोगों का हथियार क्यों नहीं छीन लेतीं? क्यों वे लोग दीवार तोड़ने के लिए कोई और हथौड़ी क्यों नहीं जुटा लेतीं। औरतों का इतना साहस, हिम्मत, अडिग मन, आखिर कहां खो जाते हैं? कौन लोग हैं जो उसके मार्ग में अवरोध उत्पन्न करते हैं, उसे प्रताड़ित, लांछित और अपमानित करते हैं।''[3.] इस सवाल का जवाब हम जानते हैं। जानकर भी जुबां बंद रखते हैं। अनजान बनने का बहाना करते हैं और सत्य यह भी है महिला सशक्तीकरण का बिगुल चाहे सभी दिशाओं में बज रहा हो, परंतु अपनी स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता की रक्षा के लिए पुरुषों के विरूद्ध आज भी बहुत कम स्त्रियां हैं जो आवाज उठाती हैं। आधुनिक औरतें चाहे जितनी भी धनी हों, जितनी भी पढ़ी–लिखी हों, जितनी भी नामी–गिरामी हों, सबकी सब अपने पतन को खुद ही बढ़ावा दे रही हैं। आधुनिक होती स्त्रियां सब कुछ देखते हुए भी अपनी आंखों पर पट्टी बांधे रहती हैं और भीतर ही भीतर सुखी होने का दिखावा करती हुई

सोचती हैं कि भारत की औरतों को पूरी स्वतंत्रता मिली हुई है। यही है महिला सशक्तीकरण का सच।

वास्तव में औरत न कभी स्वतंत्र थी और न कभी होगी। सन् 1929 में वर्ज़िनिया वुल्फ ने एक अत्यंत महत्वपूर्ण पुस्तक लिखी 'ए रूम ऑफ वन्स ओन।' औरत हमेशा से कभी पिता के घर, पति के घर, भाई के घर, मामा के घर, बेटे के घर में ही रहती आई है। औरत का अपना कोई घर नहीं होता। उसे जीवन भर दूसरों के घर में रहना पड़ता है। उसकी अपनी कोई लाइफ कोई प्राइवेसी नहीं होती। वर्ज़िनिया वुल्फ जैसी अनेक स्त्रियां प्रभा खेतान, अमृता प्रीतम, तसलीमा नसरीन ने अपनी कलम से, अपने हाथों, अपनी भाषा में स्वयं को लिखा है। अपने इतिहास को, अपने वर्तमान को और अपने आकांक्षित भविष्य को भी व्यक्त किया है। अमृता प्रीतम लिखती हैं, ''यूं तो मेरे भीतर की औरत सदा मेरे भीतर के लेखक से दूसरे स्थान पर रही है—कई बार यहां तक कि मैं अपने भीतर की औरत का अपने आपको ध्यान दिलाती रही हूँ। सिर्फ लेखक का रूप सदा इतना उजागर होता है कि मेरी अपनी आंखों को भी अपनी पहचान उसी में मिलती है।''[4.] ये स्त्री लेखिकाएं मानती हैं कि इनकी अपनी अलग संस्कृति है, अपना अलग इतिहास है, अपनी अलग भाषा है। इसके साथ इनका मानना यह भी है कि इनकी अपनी अलग देह है, जो पुरुषों से बिलकुल भिन्न है।

तसलीमा जैसी स्पष्टवक्ता, बेबाक लेखिका ने स्वयं को समाज की नजरों में नष्ट समझा जाना पंसद किया। वे लिखती हैं, ''यदि अपने अधिकारों के प्रति जागरूक कोई नारी अपने दुःख, दैन्य, दुर्दशा को दूर करना चाहती है तो उसके खिलाफ धर्म, समाज और राष्ट्र की जाहिल शक्तियां दीवार बनकर खड़ी हो जाती हैं। इसके साथ ही समाज के तथाकथित भ्रदजन भी उसे नष्ट लड़की कहने लगते हैं। नारी के शुद्ध होने की पहली शर्त ही यही है कि पहले वह नष्ट हो। बिना नष्ट हुए इस समाज के नागपाश से किसी भी नारी को मुक्ति नहीं मिल सकती।''[5.]

तसलीमा यह भी लिखती हैं कि ''औरत का कोई देश नहीं होता। देश का अर्थ अगर सुरक्षा है, देश का अर्थ अगर आज़ादी है तो निश्चित रूप से औरत का कोई देश नहीं होता। धरती पर कहीं कोई औरत आज़ाद नहीं है। धरती पर कहीं कोई औरत सुरक्षित नहीं है।''[6.]

भले ही आज न केवल पश्चिम में बल्कि भारत में भी लड़कियों को अकेले रहने का, स्वतंत्र घूमने का परिवेश मिल गया है। आज की स्त्रियां पहले की अपेक्षा अधिक आत्मनिर्भर बन चुकी हैं, जो संस्कारों की कैद से सर्वथा मुक्त हो चुकी हैं। लेकिन आज भी समाज में औरतों का एक बड़ा वर्ग ऐसा है जो पितृतंत्र, धर्म और संस्कारों की चक्की में पिस रहा है। हालांकि अनेक संस्थाओं, समाज सुधारकों ने स्त्री उत्थान और स्त्री कल्याण का बीड़ा भी उठाया हुआ है, उससे स्थितियों में कुछ हद तक परिवर्तन भी आया है। लेकिन कितनी ऐसी औरतें हैं जो अपने घरों में, अपने तरीके से बिलकुल स्वछंद जीवन जी रही हैं। कितनी औरतों को यह आज़ादी है कि वो अपनी मेहनत की कमाई से, अपना घर मकान बनाएं और खुला जीवन जिएं। कोई–कोई स्त्री जो उन्मुक्त जीवन गुजारने के लिए आगे आती है तो हमारे समाज के कर्णधार पुरुष उसे सलाह मशविरा देने आ पहुंचते हैं और अन्ततः औरत की स्वछंदता दायित्वों के पिजंरे में कैद कर दी जाती है।

वैसे नारी की सुरक्षा कहीं भी नहीं है। यद्यपि उसकी सुरक्षा के लिए अनेक कानून बने हुए हैं। यदा–कदा समाज में इनका प्रयोग भी हो रहा है। लेकिन सच्ची सुरक्षा नारी को कहीं भी नसीब नहीं है। मात्र कानून बनाने से तो समस्याएं हल नहीं हो सकतीं। आज एक पुरुष अगर महिला पर अत्याचार नहीं करता तो केवल कानून के डर से। लेकिन जिस दिन पुरुष नारी का इंसान के तौर पर सम्मान करता हुआ उस पर अत्याचार नहीं करेगा। उसी दिन सारी समस्याओं का निराकरण स्वतः ही हो जाएगा।

प्रभा खेतान नारी मुक्ति की कामना करती हुई कहती हैं, ''अब वक्त आ गया है जब स्त्रियों को अपना दृष्टिकोण बना लेना चाहिए। स्त्री को कम से कम यह तय करना होगा कि वह किसके साथ है। जिसके साथ है वे कौन से वर्ग की स्त्रियां हैं, किस जाति की हैं?

किसके प्रतिनिधित्व का दावा वे कर रही हैं। यदि स्त्री व्यक्ति है, अपनी अलग सोच और चिंतन रखती है तो अभिव्यक्ति की कला में उसे मेहनत हासिल करनी होगी। लिखना, पढ़ना, बोलना– जो लड़ाई उसकी निजी जिंदगी से शुरू हुई थी वह कहां जाकर रूकेगी, इस पर एक बार फिर सोचना होगा।''[7.]

इन स्त्री लेखिकाओं का मानना है स्त्रियों को अपने भीतर के डर को निकाल कर, अपनी अलग और विलक्षण सोच के साथ, सृजन करते हुए जीवन जीना होगा। हाथ में कलम और कला की शक्ति लेकर स्वयं अपना इतिहास लिखना होगा। महिलाओं को अकर्मण्य बनाने वाले समाज और संसार के विरूद्ध स्त्री को स्वयं खड़ा होना होगा। अपने अस्तित्व, अपने देश, और अपने घर की तलाश में स्त्री ने अपना सर्वस्व न्यौछावर किया है। अब स्वाभिमान, साहस, ईमानदारी और सच्चाई की दीवारों से उसे इच्छित देश में अपना घर, अपने हाथों से ही निर्मित करना होगा। इसी को दृष्टिगत रखते हुए अमृता लिखती हैं :–

''आज मैने अपने घर का नम्बर मिटाया है/और गली के सिरे पर लगा गली का नाम हटाया है/और हर सड़क की दिशा का नाम पोंछ दिया है/पर अगर तुम्हें मुझसे जरूर मिलना है/तो हर देश के हर शहर की हर गली का/हर दरवाजा खटखटाओ...../यह एक शाप है, एक वरदान है...../और जहां भी स्वतंत्र रूह की झलक पड़े/–समझना वह मेरा घर है.....''[8.]

इस प्रकार स्त्री से जुड़े उसकी स्वतंत्रता के शाश्वत प्रश्न, उसकी अपनी स्वतंत्रता अपने स्वत्व की खोज के साथ ही समाप्त हो पाएंगे।

–संदर्भ–

1. मनीष कुमार, महिला सशक्तीकरण : दशा और दिशा, पृ.–7, मधुर बुक्स प्रकाशन, कृष्णा नगर दिल्ली, प्र.सं–2008
2. मीनाक्षी निशांत सिंह, महिला सशक्तीकरण का सच, पृ.–1, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, संस्करण–2009
3. तसलीमा नसरीन, औरत का कोई देश नहीं, पृ.79–80, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं.–2009
4. अमृता प्रीतम, रसीदी टिकट, पराग प्रकाशन दिल्ली, पृ.–26, तीसरा संस्करण 1982
5. तसलीमा नसरीन, नष्ट लड़कीः नष्ट गद्य, पृ. 5, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा सं.–2000
6. तसलीमा नसरीन, औरत का कोई देश नहीं, पृ. 7, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं0–2009
7. प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्रीः मुक्ति कामना की दस वार्ताएं, पृ. 55, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं.–2003
8. अमृता प्रीतम, रसीदी टिकट, पृ.140, पराग प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा सं.–1982

प्रस्तुतकर्त्री

(डॉ. गीतू धवन)

प्रवक्ता हिन्दी विभाग

ए. पी. जे. स्नात्तकोत्तर

महिला महाविद्यालय, चरखी दादरी